Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN: 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 5.146
Volume - 5, Issue - 5, MAY - 2022 Publication Date: 15/05/2022

DOIs:10.2018/SS/202205002 --:-- Research Article

उपाश्रितता से मुक्ति एवं अंतिम व्यक्ति के विकास का मार्ग: निम्नवर्गीय सिद्धांत से पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अंत्योदय दर्शन तक

संजय
शोधार्थी (जेआरएफ), राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत
Email - sanjaymauryahu@gmail.com

सारांश: *1980 के दशक से उभरे सबाल्टर्न सिद्धांत ने इतिहास लेखन के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तनों का समर्थन किया है। सबाल्टर्न सिद्धांतकार औपनिवेशिक एवं उत्तर-औपनिवेशिक काल में उपाश्रित वर्गों के संघर्ष, प्रतिरोध एवं औपनिवेशिक शक्तियों के खिलाफ किए गए आम लोगों के योगदान को इतिहास लेखन में एक स्वतंत्र अस्तित्व के रूप में शामिल करने की दलील देते हैं। सबाल्टर्न सिद्धांत से जुड़े इतिहासकार समाज और राज्य में राजनीतिक सत्ता एवं अभिजात्य वर्गों के वर्चस्व के बीच समाज के सबसे पिछड़े और उत्पीड़ित लोगों के नजरिए से समाज को देखने का प्रयास करते हैं। साथ ही उपाश्रित (निम्नवर्गीय या सबाल्टर्न) समूहों को मुख्यधारा में लाने का समर्थन करते हैं। मुख्य रूप से समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्तियों को मुख्यधारा से जोड़ने के लिए पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अंत्योदय दर्शन के महत्व और उसकी प्रासंगिकता को उजागर करना इस आलेख का प्रमुख उद्देश्य है। यह आलेख इस ओर भी ध्यान आकर्षित करता है कि अब तक की प्रचलित राजनीतिक और आर्थिक विकास की व्यवस्थाएँ पिछड़े समाजों, खासकर तृतीय विश्व के देशों के लोगों के अनुकूल नहीं है। भारत के संदर्भ में पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानव दर्शन और उनके अंत्योदय विचारों के माध्यम से हम भारतीय समाज को उन बेड़ियों से बाहर निकाल सकते हैं जिन बेड़ियों में फँसे रहने की दलील सबाल्टर्न सिद्धांत करता है। इस आलेख का केन्द्रीय प्रश्न यह है कि क्या उपाश्रितवर्गों (सबाल्टर्न) की उपाश्रितता को खत्म किया जा सकता है? और क्या इसके लिए कोई भारतीय मार्ग है? मुख्य रूप से यह लेख वर्तमान में प्रचलित सबाल्टर्न विमर्श में भारतीय योगदान की विश्लेषणात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता है ।*

मूल शब्द: *अंत्योदय, सबाल्टर्न सिद्धांत, इतिहास लेखन, उपाश्रित समूह, दीन दयाल उपाध्याय, अंतिम व्यक्ति ।*

1. प्रस्तावना :

पिछले कुछ दशकों से समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े व्यक्ति के विकास का विमर्श नया मोड़ ले चुका है। समाज के हर वर्ग, हर तबके के साथ न्याय एवं समानता सुनिश्चित करने हेतु उचित राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था को अपनाने का प्रयास किया जाता है। विभिन्न असमानताओं के कारण समाज में निम्न वर्गों के साथ 'उचितता का सिद्धांत'[1]अधूरा रह जाता है। समाज में उन समूहों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए जो अधिक वंचित और भेदभाव के रूप में संवेदनशील हैं।[2] समाज के हाशिए पर खड़ा व्यक्ति जिसे निम्नवर्गीय भी कहा जा सकता है, कभी मुख्यधारा से जुड़ ही नहीं पाता है। क्योंकि न तो उसे मुख्यधारा में सुना जाता है और न ही वह अपने लिए कुछ बोल ही पाता है।[3] समाज में शक्तिशाली वर्गों और व्यवस्थाओं के मध्य निम्नवर्गीय लोगों के योगदान और साहस को सत्ता और राजनीति का भाग बनाना आसान नहीं होता। हालाँकि 1980 के दशक के बाद ख्याति अर्जित करने वाले सबाल्टर्न सिद्धांत ने समाज में निम्नवर्ग के उत्थान का विमर्श प्रस्तुत किया। इस सिद्धांत और इससे जुड़े सिद्धांतकारों का मुख्य तर्क यह है कि अब तक के लिखे गए इतिहास लेखन में आम लोगों के परिप्रेक्ष्य और विचारों की अनदेखी की गई है। सबाल्टर्न (उपाश्रित) उन समूहों को कहा जाता है जो मुख्यतः समाज के किसी न किसी क्षेत्र में दूसरों के अधीन रहे हैं एवं सत्ता व शक्ति के बल से हाशिए पर धकेले दिए गए। परंतु यहाँ प्रश्न ऐसे वर्गों के विकास का और उन्हें मुख्यधारा में लाने का है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि ऐसे लोगों को मुख्यधारा में लाने का क्या उपाय है? क्या निम्न वर्गों के उत्थान का मार्ग टिकाऊ और मजबूत है?

मानव के सर्वांगीण विकास के लिए एकात्म मानव दर्शन और पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अंत्योदय दर्शन का दूरदर्शी मार्ग हमारे पास है, जो प्रासंगिक भी है और हमारी आवश्यकताओं के अनुकूल भी। वर्तमान समय में पश्चिम के विकास मॉडलों को विकास का आदर्श मार्ग माना जाता है, जिसके साथ अपनी समस्याएँ भी हैं। अक्सर यह कहा जाता है कि पश्चिम के सिद्धांत आधुनिक विचारों पर आधारित सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था के हाशिए पर खड़े व्यक्ति को मुख्यधारा में लाने का उपाय करती है। परंतु उदारवाद एवं पूंजीवाद या समाजवाद से प्रभावित विकास की नीतियाँ वर्तमान में मानव विकास के लिए पूर्णरूपेण प्रभावी

नहीं हैं। पश्चिम का जोर आधुनिकीकरण और आधुनिकता पर रहा है जिसका मुख्य तर्क यह है कि पश्चिम की नीतियों को अपनाकर ही विकास किया जा सकता है। 'अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख' की विचारधारा उन नैतिक प्रश्नों को छोड़ देती है जो एक संवेदनशील समाज का प्रमुख हिस्सा है। यह विचार उन लोगों की अनदेखी कर देता है जो बहुसंख्यक का हिस्सा नहीं होते। पश्चिम में ऐसे कई सिद्धांतों का उदय हुआ जिसका उद्देश्य और लक्ष्य भौतिक विकास रहा है जिसमें मानव की आत्मसुख और मानसिक सुख (जिसमें परिवार और समाज से जुड़ाव भी शामिल है) पर विचार बहुत कम किया है। पश्चिम अवश्य ही मानव को भौतिक सुख देने में आगे है परंतु, आध्यात्मिक शान्ति के लिये आज भी वह भटक रहा है। पश्चिम का मार्ग टिकाऊ और सतत चलने वाला नहीं है। अध्यात्म भारतीय दर्शन का मूल है। अब प्रश्न यह भी उठता है कि क्या पश्चिम की नीतियों के माध्यम से हम निम्न वर्गों का उत्थान कर सकते हैं? क्या मात्र भौतिक विकास ही मानव प्रगति का मार्ग है? यदि ऐसा है तो पश्चिम अभी भी इसमें सफल नहीं हुआ है। प्रत्येक देश की अपनी अलग परिस्थितियाँ होती है.वहाँ की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक मूल्य एवं मान्यताओं के साथ-साथ विकास के स्तर में भी अंतर होता है।[४] इन समस्याओं को पश्चिम के उपाय समाप्त करने में सक्षम नहीं हो पाती हैं। परंतु हम फिर भी उसी के पीछे भागते हैं। गांधी जी ने लिखा है कि "आजकल भारत में हम पश्चिम वालों की बहुत नकल कर रहे हैं। कितनी ही बातों में हम इसकी जरूरत भी समझते हैं, पर इसमें संदेह नहीं कि पश्चिम की बहुत सी नीतियां खराब है, और यह तो सभी स्वीकार करेंगे कि जो खराब है, उससे दूर रहना उचित है।"[५] 'वर्तमान में उपाश्रित वर्गों को मुख्यधारा में लाने के लिए पंडित दीनदयाल उपाध्याय का अंत्योदय दर्शन सशक्त मार्ग के रूप में उपाश्रितता से मुक्ति दिला सकता है; बस आवश्यकता इसे अपनाने की है। इस आलेख का मुख्य तर्क यह है कि अपनी समस्याओं के लिए अपने उपाय होने चाहिए। परंतु अभी भी समाज में शक्ति का बोलबाला है। जाति, वर्ग, लिंग, पद आदि के आधार पर अधीनस्थ समूह मौजूद हैं। मैंने इस आलेख में 'सबाल्टर्न' को 'अंतिम व्यक्ति' के रूप में संदर्भित किया है क्योंकि वे इस पदानुक्रमित (Hierarchical) समाज के अंतिम पायदान पर खड़े हैं और लंबे समय से अधीनता का अनुभव करते आ रहे हैं।

2. सबाल्टर्न सिद्धांत का उदय एवं मान्यताएं :

पिछले कुछ दशकों के उत्तर औपनिवेशिक काल में सबाल्टर्न विचारों (सिद्धांत) ने बहुत ख्याति अर्जित की है। इसने राष्ट्रवादी, मार्क्सवादी एवं औपनिवेशिक परिप्रेक्ष्य से लिखे गए भारतीय इतिहास को नकार दिया एवं इस पर अभिजनवादी होने का आरोप लगाया। मुख्य रूप से सबाल्टर्न इतिहासकार यह दलील देते हैं कि अब तक का लिखा गया इतिहास आम लोगों के योगदान को जगह नहीं देता। यह इतिहास या तो अभिजनवादी दृष्टिकोण या सरकारों के नजरिए से लिखे गए हैं। इस तरह इतिहासकार आम लोगों के योगदान और उनके दृष्टिकोण को इतिहासलेखन में जगह नहीं देते और ना ही इन आम लोगों (subaltern) के योगदान को कोई स्वतंत्र पहचान ही देते हैं। इसका कारण ये है कि ये स्वयं अपना इतिहास लिखने में सक्षम नहीं हैं।[६] अब तक जो भी इतिहास लिखा गया है और जिन दृष्टिकोणों से लिखा गया है, उसमें जनता के इतिहास को अभिजात्य के प्रयासों के रूप में ही देखा गया है, जबकि उनका अपना स्वतंत्र अस्तित्व, लक्ष्य और मुद्दे थे। इतिहास लिखने वालों ने भी इन्हें नजरअंदाज किया। परिणामस्वरूप आम लोगों के इतिहास (people's history) को एक अलग पहचान नहीं मिल पाई।[७] सबाल्टर्न सिद्धांतकार इतिहास को 'नीचे से' लिखने पर बल देते हैं जिसमें आम लोगों के स्वतंत्र संघर्ष को भी जगह दी जाए और अभिजनवादिता को समाप्त किया जाए। इसी की शुरुआत सबाल्टर्न अध्ययन के रूप में हुई है जिसमें गुहा, गायत्री स्पीवाक, अमीन, डेविड हार्डिमन, ज्ञानेंद्र पांडे, कविराज, सुमित सरकार आदि ने प्रमुख योगदान किया। बाद के समय में ये सिद्धांतकार इतिहास को केवल निम्नवर्गीय नजरिये से ही लिखने तक सीमित नहीं रहे और अन्य तत्वों को भी इसमें शामिल किया जैसे संस्कृति, चेतना आदि। सबाल्टर्न सम्प्रदाय, वर्ग, जाति, पंथ आदि के भीतर ही पाए जा सकते हैं जिन्हें मुख्य विमर्श में अनदेखा कर दिया गया है।

सबाल्टर्न अध्ययन औपनिवेशिक कालखंड में अभिजात्य, आधिकारिक स्रोत से इतर जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता का इतिहास विनिर्मित करने की प्रविधि है।[८] सबाल्टर्न, समाज के हाशिए पर खड़े वे आम लोग हैं जो सत्ता और अन्य शक्ति के अधीन रहे हैं। इनकी अधीनस्थता ही इनके हाशिए पर पहुँचने का कारण हैं। समाज में विभिन्न शक्तियों ने उन्हें मुख्यधारा से दूर रखा है। उन्हें न सिर्फ इतिहास लेखन में बल्कि राजनीति, अर्थव्यवस्था एवं नीति निर्माण में भी नजरअंदाज किया गया है। इतिहासकार जिस 'सबाल्टर्न' शब्द का उपयोग करते हैं, इसे एंटोनियो ग्राम्शी से लेते हैं, ग्राम्शी ने प्रिजन नोटबुक में लिखा है कि 'सबाल्टर्न समाज, उस निम्न वर्ग से सम्बन्धित है जो प्रभावशाली लोगों के अधीन था, ये वो निम्नवर्गीय समूह है जिस पर प्रभुत्वशाली लोग अपना आधिपत्य बनाने की कोशिश करते हैं।[९] अपने मूल व्याकरणिक संदर्भ में 'सबाल्टर्न' केवल उन किसानों को संदर्भित करता है मार्क्स की औद्योगिक पूंजीवादी अवधारणा में एकीकृत नहीं थे।[१०]

1980 के दशक के बाद में सबाल्टर्न शब्द दक्षिण एशियाई देशों के संदर्भ में अधीनस्थता के घोतक के रूप में भी प्रचलित हुआ और तब से यह अन्य दूसरी जगहों पर भी इसी प्रकार इस्तेमाल होने लगा, खासकर तृतीय विश्व के देशों के लोगों की उपाश्रितता के संदर्भ में। तब से यह समाज के सबसे पिछड़े समूह को इंगित करने लगा। उत्तर-औपनिवेशिक भारत में सबाल्टर्न शब्द स्त्री, किसान, खेतिहर मजदूर, शरणार्थियों, माइग्रेंट वर्कर्स आदि को इंगित करता है। परंतु यहाँ ध्यान रखने की बात है कि यह पूर्ण रूप से इन समूहों को निम्नवर्गीय नहीं मान लेता बल्कि इन समूहों में भी निम्नवर्गीय वे लोग हैं जो अंत में हैं। उदाहरण के लिए भूमिहीन किसान, श्रमिकों में भी प्रवासी श्रमिक। अर्थात समाज और किसी खास वर्ग के भीतर बने पदानुक्रम में सबसे नीचे खड़े लोग ही इस

अर्थ के दायरे में आते हैं। इस प्रकार सबाल्टर्न इतिहासकार इस पद का प्रयोग समाज के गौड़, दलित, उत्पीड़ित एवं अधीनस्थ लोगों के लिए करते हैं।[11] गुहा ने सिलेक्टेड सबाल्टर्न स्टडीज में लिखा है कि सबाल्टर्न शब्द दक्षिण एशियाई समाज में अधीनस्थता के सामान्य गुण के लिए एक नाम के रूप में प्रयोग किया गया है। चाहे वह वर्ग, जाति, आयु, लिंग और कार्यालय(पद) के संदर्भ में या किसी अन्य तरीके से ही क्यों न व्यक्त किया गया हो।[12] क्योंकि सबाल्टर्न या निम्नवर्गीय समूह, समाज के शोषित वंचित एवं मुख्यधारा से बेदखल किए गए लोग हैं जो किसी न किसी रूप में दूसरों के अधीनस्थ रहे हैं। सबाल्टर्न सिद्धांतकारों अनुसार इन समूहों राजनीतिक और आर्थिक विमर्श और इतिहास लेखन से कट जाने का एक यह भी कारण था कि औपनिवेशिक भारत में राष्ट्रवाद एवं आजादी के संघर्षों से जुड़े इतिहास के आधिकारिक स्रोतों को केवल अभिजनवादी प्रयास के रूप में देखा गया जिसमें छोटे-छोटे असंख्य लोगों के प्रयासों को नजरअंदाज कर दिया गया। भारतीय इतिहास मुख्यतः तीन दृष्टिकोणों से लिखा गया है राष्ट्रवादी दृष्टिकोण, मार्क्सवादी दृष्टिकोण एवं ब्रिटिश या कैम्ब्रिज दृष्टिकोण। इन तीनों में ही आम लोगों के प्रयासों को पूर्ण रूप से स्वीकारोक्ति नहीं मिली है। इस प्रकार का इतिहास लेखन आम लोगों के संघर्ष और योगदान को भारतीय राष्ट्रवाद में जगह नहीं देता। इसी विचार के विरुद्ध गुहा के नेतृत्व में सबाल्टर्न सिद्धांत का उदय हुआ जो इतिहास को 'नीचे से' लिखने का दावा करता है।

3. विकास का पश्चिमी मॉडल :

औपनिवेशिक और उत्तर-औपनिवेशिक काल में सत्ता और अभिजात्य शक्ति जस की तस बनी रही। भारत के शोषित और दमित लोग राजनीतिक शक्ति और वर्चस्व के भँवर में फंसे रहते है। हालांकि आजादी के बाद ऐसे कई उपाय किए गए जो समाज में पीछे रह गए लोगों को न्याय देने और विकास के पथ पर लाने के लिए अपनाए गए। परंतु वे भारतीयता के बजाए पश्चिमी विचारों से इस कदर प्रभावित रहे कि उनका अंधानुकरण हमारे लिए घातक ही साबित हुआ। परिणामस्वरूप ये नीतियाँ अधिक सफल नहीं हुई। तथापि अंतिम व्यक्ति के विकास का मार्ग अनिश्चितताओं से भरा रहा। भारत के निम्नवर्गीय लोग राजनीतिक शक्ति की जकड़न से छुटकारा नहीं पा सके। जहाँ एक तरफ उपाश्रित सिद्धांत को मानने वाले इतिहासकार अपनी दलीलों को प्रखर रूप से रखते हैं और सत्ता एवं शक्ति के केंद्र में निम्नवर्गीय समूहों को भागीदार बनाना चाहते हैं, दूसरी तरफ वे यह भी दलील देते हैं कि जब तक इन उपाश्रितों की उपाश्रितता को खत्म नहीं किया जाएगा तब तक समाज में वर्ग भेद, जातिभेद, लिंगभेद बने रहेंगे। समाज में संसाधनों का उपयुक्त बँटवारा न्याय के लिए बेहद आवश्यक है । रस्किन ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि 'जितना पंक्ति में खड़े पहले व्यक्ति को मिलना चाहिए उतना ही पंक्ति में खड़े अंतिम व्यक्ति को भी मिलना चाहिए, जितना सुबह वाले को, उतना ही शाम वाले को भी।[13] उनके विचारों का मूल थाकि किस प्रकार से पश्चिम की उदारवादी और पूंजीवादी व्यवस्था श्रमिकों के शोषण को बढ़ावा देती हैं। प्रत्येक व्यक्ति के काम का समान महत्व है और समान महत्व के होते हुए प्रत्येक व्यक्ति को बराबरी का अधिकार है। इसी को गांधी ने सर्वोदय की अपनी मान्यता में पिरो कर एक नया रूप दिया है जिसका मूल 'सबका उदय' है। इसी प्रकार पश्चिम की नीतियाँ विकास के बजाए निर्भरता की संरचना का निर्माण करती हैं।[14] परिणामस्वरूप राज्य भी उपाश्रितता के जाल में फंस जाते हैं। उपनिवेशवाद की प्रक्रिया न सिर्फ राज्य को गुलाम बनाती है बल्कि लोगों को भी बाहरी सत्ता के अधीन कर देती है जो एक ऐसी परिस्थिति को जन्म देता है जिसमें निम्नवर्गीय लोग समाज के साथ-साथ कई अन्य कर्ताओं के अधीन हो जाते हैं। वे उन्हें ही अपना मुक्ति दाता मानने लगते हैं।इसका परिणाम यह होता है कि उन्हें इतिहास से बेदखल कर दिया जाता है। आज भी ऐसी अनेक नीतियाँ हैं जो नव-उपनिवेशवाद को जन्म देती है। इतिहास लेखन में अभिजनवादी विचार और राज्य का दृष्टिकोण केंद्र में रहता है और सम्पूर्ण व्यवस्था इसी के इशारे पर चलती है।[15] निम्नवर्गीय योगदान इसकी परिधि में विद्यमान रहता है। परंतु उसे स्वतंत्र पहचान नहीं मिल पाती। केन्द्र (अभिजनवादी दृष्टिकोण) प्रत्येक संघर्ष को दबाने की चेष्टा करता है और उसे दस्तावेजों में एक बुरे कृत्य की तरह दर्ज करता है। परिणामस्वरूप पीढ़ी दर पीढ़ी यह विचार प्रसारित होता जाता है। चूँकि शक्ति, सत्ता और साधन पर उनका नियंत्रण होता है, ये जैसा चाहते हैं, वही इसका हिस्सा बन जाता है। निम्नवर्गीय अपना इतिहास इसलिए भी नहीं लिख पाते क्योंकि न तो इनके पास इसकी चेतना होती है और न ही साधन। पश्चिम की यूरो-केन्द्रित विचार और सिद्धांत हमारे अनुकूल नहीं हैं। इस प्रकार सबाल्टर्न सिद्धांतकार ये दलील तो देते हैं कि इतिहास को निम्नवर्गीय नजरिए से लिखा जाए। तथापि पश्चिमी विचार निर्भरता को बढ़ावा देता है जो उपाश्रितता के समान ही है।

4. अंत्योदय एवं अंतिम व्यक्ति :

पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अंत्योदय के माध्यम से ना सिर्फ समग्र राष्ट्र बल्कि समग्र विश्व का सम्यक एवं पूर्णांक विकास हो सकता है। अंत्योदय का अर्थ समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति के उदयअर्थात विकास से हैं। इसका सरल भावार्थ यह है कि समाज में पिछड़े व हाशिए पर मौजूद व्यक्ति के उत्थान को संभव किया जा सके। सबाल्टर्न और पंडित दीन दयाल के 'अंतिम व्यक्ति' में एक साम्य मौजूद है। सबाल्टर्न सिद्धांत वर्गों के भीतर भी निर्मित विभिन्न वर्गों (classes within class) की बात करता है। समाज में अधीनता एवं शोषण के शिकार हुए व्यक्तियों का उत्थान पंडित दीनदयाल जी के दर्शन का मुख्य भाव रहा है। पंडित दीनदयाल को सबाल्टर्न के उत्थान के पुरोधा में से एक माना जा सकता है। उनका विचार था कि व्यक्तिवाद पर इतना अधिक ध्यान ना देकर उसको संपूर्ण समाज का हिस्सा मानकर उस पर विचार करना चाहिए। क्योंकि जब तक समाज में व्यक्ति पिछड़ा है, हाशिए पर हैं और उसको एकात्म ना करने का प्रयास प्रचलित है, तब तक समाज में समानता एवं न्याय को स्थापित नहीं किया जा सकता।

5. पश्चिमी विचार एवं व्यवस्थाएं विकास के अनुकूल नहीं :

पंडित दीनदयाल जी का विचार था कि यदि हमें प्रगति करनी है तो पश्चिम के अंधानुकरण को त्यागना पड़ेगा। पंडित जी ने लिखा है कि कुछ लोग ऐसे भी हैं जो पाश्चात्य राजनीति एवं अर्थनीति की दिशा को ही प्रगति की दिशा समझते हैं और इसलिए भारत पर वहाँ की स्थिति को थोपना चाहते हैं। यूरोपीय ताकतों ने अपने उपनिवेश स्थापित करने हेतु संघर्ष किया और बहुतों को उपनिवेश बनाया। इनका एक हजार साल का इतिहास पारस्परिक संघर्ष का इतिहास ही रहा है। इन्होंने अपने देशों से बाहर जाकर स्वतंत्र देशों को ना सिर्फ गुलाम बनाया बल्कि मानसिक रूप से भी उनके मन मस्तिष्क में स्व-संस्कृति के प्रति घृणा और द्वेष का भ्रम डाला। उन्होंने ऐसी नीतियों को लागू किया जिसके माध्यम से औपनिवेशिक राज्य में रहने वाले लोग पश्चिम के विचारों को ही सर्वश्रेष्ठ एवं सबसे आधुनिक माने और इस संदर्भ में औपनिवेशिक ताकतें कामयाब भी रहे। इसलिए फ्रान्ज़ फैनन ने अपने लेख -'कॉलोनियल माइंड' में इस मानसिकता का उल्लेख किया है कि औपनिवेशिकता में रहने वाले लोग अपने को हीन मानने लगते हैं और इनकी तरह बनना चाहते हैं.[16] फैनन के लिए, औपनिवेशिक ताकतें उपनिवेशवादी लोगों के पूर्व-औपनिवेशिक इतिहास को "बर्बरता, गिरावट और पशुता"के रूप में लिखने का प्रयास करते हैं ताकि पश्चिमी सभ्यता के वर्चस्व को सही ठहराया जा सके।[17] पंडित जी का कहना था कि पश्चिम की व्यवस्था व्यक्ति के शोषण को बढ़ावा देती है। वह हर चीज को पैसों के रूप में तौलती हैं। 'अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख' की बात करते हैं जिसमें सभी व्यक्तियों का सुख सम्मिलित नहीं होता है। इसी प्रकार न्याय के सिद्धांत में जॉन रॉल्स निष्पक्षता के रूप में न्यायकी अवधारणा का बचाव करते हैं।[18] उनका मानना है कि न्याय का पर्याप्त लेखा-जोखा उपयोगितावाद से नहीं लिया जा सकता। क्योंकि इसमें अल्पसंख्यकों के अधिकारों और हितों की उपेक्षा करके बहुमत को अधिक खुशी दी जाती है और 'अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख' को ही राज्यों का लक्ष्य बना दिया जाता है।[19] महात्मा गांधी ने सर्वोदय में लिखा है- "पश्चिम के देशों में साधारणतया माना जाता है कि बहुसंख्यक लोगों का सुख, उनका अभ्युदय बढ़ाना मनुष्य का कर्तव्य है सुख का अर्थ केवल शारीरिक सुख रुपए-पैसे का सुख किया जाता है। ऐसा सुख प्राप्त करने में नीति के नियम भंग होते हो तो इसकी ज्यादा परवाह नहीं की जाती। इसी तरह बहुसंख्यक लोगों के सुख का उद्देश्य रखने के कारण पश्चिम के लोग थोड़े लोगों को दुख पहुँचा कर भी बहुतों को सुख दिलाने में कोई बुराई नहीं मानते। इसका फल हम आज पश्चिम के सभी देशों में देख रहे हैं।"[20]

पंडित जी का कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति को न्यूनतम प्राप्त करने का जन्मसिद्ध अधिकार है। उनका कहना था कि मानव के विकास हेतु प्रत्येक का काम अर्थव्यवस्था का आधारभूत लक्ष्य होना चाहिए। अर्थात अर्थ-रचना में व्यक्ति अथवा उसके रोजगार का विचार करते समय हमें पूर्ण रूप से एकात्म मानव का सदैव विचार करना होगा।[21] पिछली शताब्दियों की आर्थिक चिंतन और उस पर आधारित अर्थव्यवस्था का परिणाम हुआ है कि व्यक्ति की वास्तविकता मानो हमारी दृष्टि से ओझल हो गई है। हम उसके व्यक्तित्व का तनिक भी विचार नहीं करते। पूंजीवादी अर्थशास्त्र मनुष्य को एक अर्थ-लोलुप प्राणी मानकर चलता है। व्यक्ति को ही सब कुछ मानने वाली अर्थव्यवस्था ने व्यक्ति को बिल्कुल ही समाप्त कर दिया है। स्पष्ट पूंजीवादी अर्थव्यवस्था मानव का विकास करने में असमर्थ सिद्ध हुई है। इसी प्रकार समाजवादी अर्थव्यवस्था भी पूंजीवाद के प्रतिक्रिया स्वरूप सामने आई परंतु इसने भी व्यक्ति को राज्य के अधीन कर दिया। हमें समाजवाद अथवा पूंजीवाद नहीं बल्कि मानव का उत्कर्ष और सुख चाहिए और यही पंडित जी के अंत्योदय दर्शन का मूल भावार्थ हैं। हालांकि पंडित जी ने पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान को अपनाने से मना नहीं किया था बल्कि हमारी आवश्यकता की वस्तु हमें अवश्य स्वीकार करनी चाहिए। परंतु पश्चिम की वस्तुओं को सर्वांगीण नहीं मान लेना चाहिए।प्रत्येक व्यक्ति के उदय को ही संपूर्ण समाज का दायित्व माना जाना चाहिए।

6. विकास का पैमाना 'अंतिम व्यक्ति' :

समाज की उन्नति और समृद्धि को नापने का पैमाना क्या होना चाहिए? क्या हम यह देखें कि हमारे देश में सबसे अमीर व्यक्ति कितना अमीर है या कितने अरबपति हैं? या हमारा सकल घरेलू उत्पाद कितना है? क्या ये पैमाने किसी समाज का विकास का स्तर माप सकते हैं? और क्या ये न्यायसंगत हैं? पंडित जी के विचार में समाज की उन्नति और व्यक्ति के विकास को मापने का एक पैमाना अवश्य होना चाहिए। वर्तमान संदर्भ में देखें तो विभिन्न राष्ट्र अपने विकास को सबसे उच्च पायदान पर खड़े व्यक्ति के विकास के रूप में देखते हैं। परंतु वे उन व्यक्तियों को उस विकास के पैमाने में शामिल नहीं करते जो सबसे निचले पायदान पर हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने आर्थिक योजनाओं तथा आर्थिक प्रगति का मापन समाज के ऊपर की सीढ़ी पर पहुंचे व्यक्ति से नहीं बल्कि समाज के सबसे अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति के विकास को आधार मानकर करने की बात की है। यही विचार अंत्योदय दर्शन की नींव है जो विकास को अंतिम व्यक्ति से शुरु करता है। यह दर्शन न मात्र समाज को नैतिक और चेतन ही बल्कि संवेदनशील भी बनाता है। पंडित जी का कहना था कि किसी भी समाज का विकास अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति के विकास से संबंधित हैं। यदि हम समाज के विकास को उच्च स्तर के व्यक्तियों के विकास को ध्यान में रखकर करेंगे तो अवश्य ही समाज में ऐसे वर्गों का निर्माण होगा जो सदैव उत्पीड़ित, शोषित एवं हाशिए पर रहेंगे। यदि समाज में अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति को उचित एवं न्यूनतम मात्रा में उनकी जरूरतों को पूरा किया जाए तो सत्य में ही हम मानव को एकात्म कर सकते हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को मानव के सर्वांगीण विकास का मार्ग माना जा सकता है। उन्होंने पश्चिमी विचारों जिसमें व्यक्ति के आंतरिक और बाहरी आवश्यकताओं को अलग अलग मानकर विचार करता है, को नकार दिया है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने व्यक्ति के

प्रत्येक पहलू का समग्रता में विचार किया है एवं उसके मन, बुद्धि, आत्मा और शरीर की आवश्यकताओं को एक मानकर विचार करने का दर्शन प्रस्तुत किया है।[22]

7. एकात्म मानव दर्शन से उपाश्रितता (subalternity) का अंत :

पंडित दीनदयाल ने भारतीय समाज में दबे-कुचले-शोषित लोगों को देखकर यह कहा कि प्रत्येक व्यक्ति का उदय होना चाहिए और जो अंतिम पायदान पर है, उसका उदय समाज का नैतिक कर्तव्य है। पंडित जी ने वर्तमान में प्रचलित विभिन्न राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्थाओं को समझा और उसे परखा। उसी के आधार पर उन्होंने यह कहा कि पश्चिम की जितनी भी व्यवस्थाएँ हैं, वह हमारी समस्याओं को दूर करने में सक्षम नहीं है। पंडित जी ने प्रचलित पूंजीवादी व समाजवादी व्यवस्थाओं को व्यक्ति के विकास में न सिर्फ अधूरा बल्कि बाधक भी माना। पश्चिम की जितनी भी व्यवस्थाएं हैं वह मानव के विभिन्न पहलुओं पर अलग-अलग रूप से विचार करती हैं। यही कारण है कि मानव का सर्वांगीण विकास संभव नहीं है। एक पहलू पर अध्ययन करना और उसका उपचार करना, दूसरी चीज को छोड़ देना; इसी कारण व्यक्ति सुखी नहीं है। उन्होंने कहा कि पश्चिम की व्यवस्था निरी भौतिकवादी है। उनका उद्देश्य अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुखका है।[23] एक प्रश्न यहां यह खड़ा होता है कि यदि अधिकतम व्यक्तियों को देखते हुए समाज में नीतियों का निर्माण किया जाएगा तो जो व्यक्ति अंतिम पायदान पर छूट गया है, उसके विकास की बात कौन करेगा? अंतिम पायदान पर मौजूद दमित, शोषित एवं उपाश्रित व्यक्तियों के उदय को ही उन्होंने अंत्योदयका नाम दिया। उन्होंने कहा कि समाज में जब तक असमानता प्रचलित है तब तक एक व्यक्ति, दूसरे व्यक्ति के अधीन है। एक व्यक्ति अपने आपको दूसरों से छोटा समझता है। समाज में जब तक समानता के नियम लागू नहीं किए जाते तब तक न्याय स्थापित नहीं किया जा सकता। हमें अपनी समस्याओं के लिए अपने उपायों की आवश्यकता है। गांधी जी ने भी सर्वोदयकी अवधारणा पर बल दिया।[24] उन्होंने कहा कि समाज में सब का उदयहोना चाहिए। इसलिए उन्होंने सर्वोदय दर्शन को हमारे समक्ष प्रस्तुत किया। परंतु प्रश्न फिर भी यह है कि सर्वोदय की शुरुआत कहाँ से की जाए? इसे कैसे किया जाए? यह दुविधा पंडित जी के अंत्योदय विचार में नहीं रहती। हालांकि उसका भी मूल्य सर्वोदय ही है। अतः अंतिम पायदान पर जो है वहीं से शुरू करना चाहिए। इससे धीरे-धीरे असमानता भी समाप्त होगी और मानव की उन्नति और विकास का मार्ग प्रशस्त होगा। जहाँ पश्चिम का विचार व्यक्तिवाद पर बल देता है, वहीं भारतीय विचार समाज पर। उनका मानना है कि व्यक्ति समाज का ही हिस्सा है। इसके बिना व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं है।[25] पंडित जी के दर्शन का विचार है कि जो कमाएगा सो खिलाएगा भी।जबकि पश्चिम का विचार जो कमाए वो खाएका है। पंडित जी के विचार का मूल यह है कि 'जियो और जीने में सहयोग करो' न कि 'जियो और जीने दो'। यही विचार व्यक्ति के ऊपरसमाज की महत्ता को सिद्ध करता है। अंतिम व्यक्ति का उदय ही विकास पथ का मार्ग है। निम्नवर्गीय सिद्धांत के साथ पंडित जी के विचार को जोड़ देने से समाज में जाति, पंथ, पद, लिंग, वर्ग आदि के आधार पर उपाश्रित समूहों को पहचान मिलना तय है।

8. निष्कर्ष :

सबाल्टर्न विचार की चेतना ने समाज में उन लोगों की बात को उठाया जो निम्नवर्गीयता का हिस्सा हैं। स्पष्ट रूप से उपाश्रितता की समाप्ति न सिर्फ़ हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए बल्कि उसको पहचानना भी। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचार इस ओर अत्यंत प्रासंगिक और प्रभावकारी हैं जो 'अन्त के उदय' का लक्ष्य लिये हुए है। मुख्यतः समाज मे जाति, वर्ग, पद, लिंग और शक्ति के संबंध में पंडित जी के विचार-दर्शन का विमर्श अवश्य होना चाहिए। निम्नवर्गीय प्रसंग में उपाश्रितता (subalternity) मूल विचार है। इससे जुड़े सिद्धांतकार इतिहास को 'नीचे से' लिखने पर बल देते हैं। अंत्योदय दर्शन 'अंतिम व्यक्ति' के उदय पर बल देता है। अतः उपाश्रित वर्गों की अधीनता की समाप्ति और इतिहासलेखन में अभिजनवादी दृष्टिकोण सबाल्टर्न सिद्धांत का मूल हथियार है जो अब तक के लिखे इतिहास को चुनौती देता है। सबाल्टर्न सिद्धांतकार और दीनदयाल के विचारों का केन्द्र इस संरचना को तोड़ने का मार्ग प्रशस्त करता है। निष्कर्ष रूप में अंत्योदय दर्शन उपाश्रित व्यक्तियों की उपाश्रितता से मुक्ति का मार्ग देता है।

संदर्भ :

1. RAWLS, JOHN (1971). *A Theory of Justice*. Harvard University Press. *JSTOR*, www.jstor.org/stable/j.ctvjf9z6v. Accessed 13 July, 2021.
2. Ibid.
3. Morris, R. C., & Spivak, G. C. (2010). *Can the subaltern speak? in Reflections on the history of an idea*.
4. Huntington, S. (1965). Political Development and Political Decay. World Politics, 17(3), 386-430. doi:10.2307/2009286.
5. गाँधी, मो. क. (2011 संस्करण). सर्वोदय, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन. पृ. 5.
6. Chakraborty Spivak, Gayatry. Selected Subaltern Studies-Subaltern Studies: Deconstructing Historiography "Subaltern Studies: Deconstructing Historiography".

7. Oxford University Press.
8. Guha, Ranajit (1982). "On Some Aspects of the Historiography of Colonial India". Subaltern Studies. pp. 1–8.
9. Chakraborty Spivak, Gayatry. Selected Subaltern Studies-Subaltern Studies: Deconstructing Historiography "Subaltern Studies: Deconstructing Historiography".
10. Antonio gramsci - prison notebook (Gramsci, Antonio (1996). Hoare, Quintin; Smith, Nowell (Ed.). *Selections from the Prison Notebooks*. Orient BlackSwan. pp. 53.
11. Ibid.
12. अमीन, शाहिद और पांडे, ज्ञानेंद्र, (1995) सं. निम्नवर्गीय प्रसंग. खण्ड. १. २ vols. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन,
13. Guha, R., &Spivak, G. C. (1988). *Selected Subaltern studies*. New York: Oxford University Press.
14. https://www.britannica.com/topic/Unto-This-Last
15. Frank, A. (1978). Development of Underdevelopment or Underdevelopment of Development in China. Retrieved August 13, 2021, from http://www.jstor.org/stable/188950
16. Frank. Lechner, (2001) Globalization theories: World-System TheoryArchived2013-04-29 at the Wayback Machine,
17. Hilton, Blake. (2011). Frantz Fanon and colonialism: A psychology of oppression. Journal of Scientific Psychology. 46-59.
18. Fanon, Frantz (2004) [1961]. The Wretched of the Earth. Translated by Philcox, Richard. With a foreword by Bhabha, Homi K. and a preface by Sartre, Jean-Paul. New York: Grove Press.
19. https://www.britannica.com/biography/John-Rawls
20. Ibid.
21. गांधी, मो. क. (2011 संस्करण). सर्वोदय. सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन. पृ. 5.
22. उपाध्याय, दीन दयाल. एकात्म मानववाद (2008) (नौवां संस्करण). जागृति प्रकाशन.
23. Ibid.
24. गाबा, ओ. पी. राजनीतिक चिंतन की रूपरेखा (छठा संस्करण 2016).पृ.124.
25. गांधी, मो. क. सर्वोदय (2011 संस्करण). सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन. पृ. 5.
26. Sharma, Gagan &Singh, Sanjeet & Bawa, Dr. (2016). A review paper on Integral Humanism: Comparison of Deen Dayaal Upadhyay and his counterparts. Asian Academic Research Journal of Multidisciplinary. 5.